प्रथम खण्ड

श्री श्री माँ आनन्दमयी

श्री श्री माँ का कलकत्ते में आगमन

- श्री अमूल्यकुमार दत्तगुप्त

जीवन कथा और उपदेश

बंगला सन् १३३८ (१९३१, जून–जुलाई) के आषाढ या श्रावण मास में माँ के साथ मेरी पहली मुलाकात हुई थी । अनेक दिनों से श्री श्री माँ आनन्दमयी के बारे में तरह–तरह की बातें सुनता आ रहा था । कुछ लोग इनके एकान्त अनुगत भक्त थे, और कुछ ऐसे भी थे जो इनके सम्बन्ध में अश्लील कटूक्ति करने में द्विधा बोध नहीं करते थे । इस प्रकार परस्पर विरोधी बातें सुनकर विशेष आग्रहवश माँ के साथ मुलाकात करने नहीं गया । लेकिन भेंट करने की इच्छा काफी पहले से थी । समय न आने पर कुछ नहीं होता समझकर ही विलम्ब करता रहा । इसी बीच श्रीयुक्त जगदीश वसु[1] महाशय से मेरा परिचय हुआ । वे माँ के एक भक्त हैं । माँ के सम्बन्ध में इनसे दो–एक प्रशंसासूचक बातें सुनने में आई । लेकिन उन तथ्यों में कोई विशेषता नहीं थी । उन बातों को सुनने के बाद माँ के साथ मुलाकात करने की प्रबल आकांक्षा उत्पन्न हो गई, ऐसी बात भी नहीं हुई ।

बातचीत के सिलसिले में एक दिन जगदीश बाबू ने मुझसे कहा– 'अगर आप माँ से मुलाकात करना चाहें तो मैं आपको वहाँ ले जा सकता हूँ ।'

१. श्रीयुक्त जगदीश वसु कृषि विभाग में कार्य करते थे ।

मैंने यह मौका छोड़ना उचित नहीं समझा । कारण मैंने यह सोच लिया था कि अकेले जाकर मुलाकात करना मेरे लिये संभव नहीं होगा। विशेष रूप से एक महिला के साथ । फलतः जगदीश बाबू के प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने के बाद एक दिन निश्चित कर लिया। याद है, उस दिन रविवार था । भोर के वक्त एक बार जोरों से वर्षा हुई थी। सबेरे आकाश मेघाच्छन्न था । रह–रहकर सूरज दिखाई दे जाता था । सड़क पर बहुत कम लोग आ–जा रहे थे । रमना का मैदान एक तरह से जनशून्य था । मैंने सोचा कि पानी का बरसना ठीक ही हुआ । शायद माँ के निकट भीड़–भाड़ नहीं होगी और मुझे बातचीत करने का अवसर मिलेगा । हमलोग बातचीत करते हुए रमना के मैदान तक आ गये । आश्रम कहाँ पर है, यह मैं नहीं जानता, सुनकर जगदीश बाबू जरा चकित हुए । होने की बात भी है । विस्तीर्ण श्यामल मैदान के मध्य आरक्तशीर्ष उन्नत मन्दिर अनायास लोगों की दृष्टि आकर्षित करता है । जब कि मैं इतना अनुसंधित्सा–शून्य हूँ कि यह किसका मंदिर है, किसने बनवाया है, इस सम्बन्ध में मेरे मन में कभी कोई जिज्ञासा उत्पन्न नहीं हुई और न उसे दर्शन करने की आकांक्षा उत्पन्न हुई । बहरहाल, हम दोनों थोड़ी देर बाद आश्रम में आ गये ।

आश्रम का प्रवेश द्वार पूर्व दिशा की ओर है । आश्रम में प्रवेश करते ही पश्चिम दिशा में टीन की छतवाला एक बृहत् नाट मन्दिर दिखाई देता है । बाद में पता चला कि इसका निर्माण श्रीयुक्त विनयसेन (मुंसिफ) महाशय ने अपनी कन्या की स्मृति में कराया था और माँ ने उसका नामकरण किया है – नाम घर । उत्सवादि के अवसर पर उक्त मन्दिर में कीर्तनादि होता है । उसके उत्तर दिशा में छोटी सी गुफा की तरह ईंटों से निर्मित एक कोठा है । उसमें श्री श्री माँ का पादपद्म स्थापन किया है । इस कोठा से सटा उत्तर की ओर आश्रम का मंदिर है । मंदिर में कई विग्रह स्थापित हैं । वेदी के ऊपर विष्णु, अन्नपूर्णा और काली मूर्ति एक ही आसन पर स्थित हैं । वेदी के नीचे

काली मूर्ति का एक फोटोग्राफ है । अन्यान्य विग्रहों के साथ इनकी भी पूजा होती है । उक्त फोटोग्राफ जिस मूर्ति की है, वह वेदी के नीचे एक गुफा में स्थापित है। वर्ष में जब माँ का जन्मोत्सव होता है तब एक बार उक्त मूर्ति के दर्शन होते हैं । शेष समय गुफा का द्वार बन्द रहता है ।

इस मन्दिर के उत्तर पूर्व ओर एक चौकोर साफ-सुथरी फूस की झोपड़ी है । इसका फर्श और बरामदा ईंट से पक्का बनाया गया है । इसी कमरे में माँ रहती हैं । हम लोग जब आश्रम पहुँचे तब उस समय माँ उक्त कमरे के बरामद के उत्तर-पूर्व दिशा की ओर बैठी थीं । पास ही एक प्रौढ़ा विधवा बैठी थीं । मैंने सोचा कि शायद यह महिला माँ की परिचारिका हैं । बाद में पता चला कि वे भी हम लोग की तरह आगंतुक हैं ।

जगदीश बाबू ने माँ का चरण-स्पर्श कर प्रणाम किया । मैंने दूर से ही प्रणाम किया । माँ ने जगदीश बाबू को देखकर कहा – 'पिताजी, मजे में हो तो ?'

जगदीश बाबू ने कहा – 'हाँ, माँ, एक तरह से मजे में हूँ ।'

माँ ने जगदीश बाबू से उनकी लड़कियों का कुशल मंगल पूछा। इसके बाद कुछ देर तक सभी नीरव रहे । बाद में जगदीश बाबू माँ को बातचीत करने की ओर प्रवृत्त करने के लिए बोले – 'माँ, कुछ भी अच्छा नहीं लगता ।'

माँ ने कहा – "अच्छा न लगने की बात ही है । क्योंकि तुम लोग तो आनन्द की मूर्ति हो । खण्ड आनन्द तुम लोगों को अपने में कैसे रख सकता है ? अखण्ड आनन्द का आस्वादन तुम लोगों के भीतर मौजूद है । देखो, बाजार जाते समय तुम लोग अक्सर कहते हो कि वहाँ से यह तरकारी लाना, वह तरकारी लाना । इसका कारण यह है कि उन तरकारियों को तुम लोगों ने खाया है और उनके स्वाद

से परिचित हो गये हो, इसीलिए पुनः भोग करने के लिए उसे खरीदने को कहते हो । इसी प्रकार तुम लोगों के प्रत्येक में सच्चिदानंद का आस्वादन है और संसार में उसी आनन्द की तलाश में चक्कर काट रहे हो । कभी सोचते हो कि आनन्द शायद धन में है, कभी सम्मान में, कभी बेटा–बेटी में – इसी प्रकार एक न एक धारणा लेकर चक्कर काट रहे हो। लेकिन कोई भी चीज उस सच्चिदानन्द का आनन्द नहीं दे रही है । इसीलिए शान्ति प्राप्त नहीं कर पा रहे हो । कुछ भी स्थायी रूप में अच्छा नहीं लगता ।''

जगदीश बाबू ने पूछा – 'तब उपाय क्या है ?' माँ ने कहा – 'नाम लेते रहो । सर्वथा नाम लो, इससे सब पाओगे । शान्ति, मुक्ति सब कुछ नाम से प्राप्त होता है ।'

मैंने पूछा – ''अगर शान्ति–मुक्ति नाम से प्राप्त हो जाय तो गुरु की कोई आवश्यकता नहीं है ?''

अब तक माँ जगदीश बाबू की ओर देखती हुई बोल रही थीं। मेरा प्रश्न सुनकर मेरी ओर देखती हुई बोलीं – ''ठीक पिताजी, तुम अगर यह सोचते हो कि गुरु के बिना तुम्हारा काम हो जायगा तो इसमें दोष क्या है ? तुम यों ही नाम करते जाओ, उससे हो जायेगा। जगत् में कोई चीज व्यर्थ नहीं जाती । यह जो पेड़ से पत्ता गिर रहा है, यह भी वृथा नहीं हैं । तुम लक्ष्य करो या न करो, यह भी तुम्हारे ऊपर अपना छाप रखता जा रहा है । शायद समय पर यह पुनः जाग उठेगा । इसलिए नाम करने पर फल प्राप्त करोगे ही । हाँ, यह ठीक है कि जैसे रोगी काफी दिनों से बीमार रहने पर दुर्बल और सामर्थ्यहीन होकर सोचने लगता है कि अगर कोई उसके बिछौने के पास बैठता तो वह उसे पकड़कर उठ पाता । अकेले उठना–बैठना उसके लिए असंभव हो जाता है । इसी प्रकार कोई–कोई स्वयं साधना करते–करते क्लांत और निराश होकर सोचता है कि अगर कोई एक गुरु रहता तो उसके सहारे वह और आगे बढ़ सकता था ।

मनुष्य उपलक्ष्य के बिना चल नहीं पाता, इसीलिए गुरु की आवश्यकता होती है इसका मतलब यह नहीं कि गुरु के बिना भगवान् को नहीं बुलाया जा सकता।'

इस तरह की अनेक बातें हुई । सभी बातें मधुर लगी, माँ तो सर्वदा हँसमुख रहती हैं । बीच-बीच में हँसी की लहर बिखर जाती है । यह हँसी अभिनव है । हम लोगों की हँसी की तरह दुःख और निराशा मिश्रित नहीं है। यह गोमुखी निःसृत गंगा की पावन धारा की भाँति अनाविल उद्दाम है। इसकी पुण्य धारा मन-प्राण को मानो प्लावित कर देती है ।

इस घटना के बाद मैं बहुत दिनों तक माँ से मुलाकात नहीं कर सका। इसके बाद मुझे पूजा के अवसर पर छुट्टी मिली । हवा-पानी बदलने के लिए सपरिवार काशी आया । काशी में गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज के अध्यक्ष महामहोपाध्याय श्रीयुक्त गोपीनाथ कविराज एम. ए. महाशय स्वनामधन्य व्यक्ति हैं । बचपन से ही वे मुझसे स्नेह रखते आये हैं । वे अगाध पण्डित तथा साधन-भजन में उन्नत हैं । आप श्रीमत् विशुद्धानन्द परमहंस के शिष्य हैं। एक दिन उनके कमरे में श्री श्री माँ आनन्दमयी के कई फोटो देखे । वे सब गुरुदेव के फोटो के बगल में थे । गोपीनाथ जी में संकीर्णता जरा भी नहीं हैं । सभी महापुरुषों के प्रति वे श्रद्धान्वित हैं । माँ का फोटो गोपीनाथजी के कमरे में हैं, देखकर मैंने पूछा – 'आपको ये फोटो कहाँ से प्राप्त हुए ? क्या माँ के साथ आपका परिचय हैं ?'

उन्होंने कहा – 'हाँ, हरिद्वार में माँ मेरे यहाँ ७-८ दिन थीं। इसके अलावा उन्हें काशी में भी देख चुका हूँ ।'

मैंने प्रश्न किया – 'अच्छा, माँ को देखने पर आपको कैसा लगता है ? वे किस स्टेज की हैं ?'

गोपीनाथ बाबू ने दार्शनिक परिभाषा में एक स्टेज का नाम बताया जिसे मैं समझ नहीं सका ।' उत्तर में उन्होंने कहा – फिर 'किस स्टेज' की हैं, यह क्यों पूछ रहे हो ?'

अज्ञ होकर प्रज्ञावानों की तरह प्रश्न करने के कारण मैं जरा लज्जित हो गया । मेरे लिए लज्जित होने के लिए कोई कारण नहीं था । क्योंकि गोपीनाथ बाबू के आगे पाण्डित्य प्रदर्शन करने का दुस्साहस करने की इच्छा मेरे मन में नहीं थी । बहरहाल, मैंने उनसे कहा – 'आप साधारण रूप में मुझे बताएँ कि माँ की क्या स्थिति है ?'

गोपीनाथ बाबू ने कहा – 'माँ की बातें सुनने और उनके भावों पर गौर करने के बाद मैंने शास्त्रों से उसे मिलाया तो इस निश्चय पर पहुँचा कि माँ में पूर्णज्ञान की स्थिति है ।'

इस बात के अर्थ को मैं ठीक समझ गया; ऐसा नहीं है; पर मुझे लगा माँ उन प्राचीन मंत्र द्रष्टाओं के समान हैं जिन्होंने कभी उदात्त कंठ से घोषणा की थी–

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तं आदित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।

पूजा की छुट्टी के बाद मैं जब ढाका वापस आया तब से दोनों वक्त माँ के पास जाने लगा । सवेरे कालेज का कार्य समाप्त कर माँ के पास २–१ घण्टा जाकर रहता था । तीसरे पहर पत्नी और लड़कियों को लेकर जाता था । मुझे सवेरे का समय अच्छा लगता, क्योंकि उस समय विशेष भीड़ नहीं होती थी। माँ के श्रीमुख से अनेक बातें सुनने में आती । कभी वे अपने जीवन की घटनाएँ सुनातीं तो कभी उपदेश देतीं । कभी–कभी बातें करते समय ऐसा लगता जैसे वे भावावेश में आ गईं हैं । मुख मण्डल ईषत् रक्तिमाभ दोनों नेत्र उज्ज्वल, ज्योतिर्मय, स्थिर, किसी बाह्य वस्तु से आबद्ध नहीं है। सारगर्भित बातें निर्झरिणी की स्रोत की तरह अनायास निकलती चली आ रही हैं और ये बाते शक्तिमन्त हैं, उसे स्पष्ट ककिया जा सकता है । जिन लोगों ने प्रत्यक्ष किया हैं, उसे वही समझ सकते हैं । तीसरे पर माँ साधारणतः महिलाओं

के घिरी रहती थीं । हम लोग के लिए दूर थी । लेकिन जब कभी वे मैदान में आकर बैठती थीं, तब एक ओर महिलाएँ रहती तो दूसरी ओर हम लोग रहते थें ।

एक दिन सवेरे बातचीत के सिलसिले में माँ अपने जीवन के बारे में कहती रहीं । बोलीं – "एक दिन ऐसा भी था जब मैं पर्दानशीन घर की बहू थी । सर्वांग ढांककर लगभग एक हाथ का घूँघट काढ़ती थी । कहीं कोई देख न ले, इसलिए घर के दरवाजे और खिड़कियाँ बन्द रखती थी । जिस कमरें में रहती थीं, उसे साफ–सुथरा रखती थीं । कूड़े का एक कण भी नहीं छोड़ती थी । भोजनादि के पश्चात् शयन घर में प्रवेश करते समय हाथ–पैर धोकर पवित्र भाव से प्रवेश करती थीं । और आज–कल लज्जा नहीं, शर्म नहीं, सभी के साथ बातें कर रही हूँ, शुचि–अशुचि के बारे में ख्याल नहीं करती । न जाने मैं क्या हो गई हूँ ।

उन दिनों हम लोग शाहबाग में रहते थे । यहाँ रहते समय जब मैं भोजन बनाने लगती तब अक्सर एक स्थान की तस्वीर मेरी आंखों के सामने तैर जाती थी ! वह तस्वीर और कुछ नहीं, वह तो ढाका के सिद्धेश्वरी मंदिर की होती थी । लेकिन उस समय मैं यह नहीं जानती थी । उस चित्र को देखने पर मुझे ऐसा लगता जैसे वह सिद्धेश्वरी तला का है । मैं अक्सर भोलानाथ[1] से पूछती कि 'सिद्धेश्वरी तला' कहाँ

१. आप श्री श्री माँ आनन्दमयी के पति हैं । आपका वास्तविक नाम है – श्रीयुक्त रमणी मोहन चक्रवर्ती । 'भोलानाथ' नाम माँ ने रखा हैं । इन्हें 'रमा पगला' भी कहा जाता है । आप भी एक महापुरुष हैं। ढाका, सिद्धेश्वरी, तारापीठ, उत्तरकाशी, ज्वालामुखी आदि स्थानों में आप कठोर तपस्या कर चुके हैं । भारत में ऐसा कोई भी तीर्थस्थान नहीं हैं जहाँ आप न गये हों । बाबा भोलानाथ को करुणा का अवतार कहने पर कोई अत्युक्ति नहीं होगी । श्री श्री माँ के हजारों भक्तों को आप पुत्रवत् स्नेह करते हैं । रोग–शोक से पीड़ित अनेक व्यक्तियों को भोलानाथ के निकट शरणापन्न होते देखा है ।

है ? भोलानाथ मेरे प्रश्न का जवाब नहीं दे पाते थे । एक दिन वे सिद्धेश्वरी तला याद करके मुझे एक जगह ले गये, पर मैंने देखा कि जहाँ का चित्र मैं देखती हूँ, यह वह स्थान नहीं हैं ।

"इसी समय बाउल बाबू[२] अक्सर भोलानाथ के यहाँ आते थे। जब उससे उस स्थान के बारे में पूछा तो वह कुछ बता नहीं सका। शाम के समय हम लोग रमना की कालीबाड़ी में आरती देखते तब मुझमें न जाने कैसा भाव होता । घण्टों बीत जाते, पर मैं समझ नहीं पाती थी । कुछ दिन इस तरह बीत जाने पर एक दिन पुजारी ने भोलानाथ से कहा – 'आप लोग इस तरह यहाँ इतनी रात गये बैठे रहते हैं, इससे हम लोगों को बड़ी असुविधा होती है, क्योंकि हम लोग मंदिर का दरवाजा बन्द करके अन्यत्र काम से नहीं जा पाते ।' उस दिन यह बात सुनकर आरती के बाद से मैं वहां नहीं ठहरती थी। घर चली आती थी । हम लोगों के साथ बाउल बाबू भी कालीबाड़ी जाया करते थे । हम लोग जब अपने घर की ओर लौटते तब वे अक्सर पूर्व की ओर चले जाते थे । उन दिनों उधर के इलाके में भयंकर जंगल था, पर बाउल बाबू बहुत साहसी थे । उस जंगल के भीतर घने अंधकार से गुजरते समय जरा भी भयभीत नहीं होते थे।

एक दिन भोलानाथ ने उससे पूछा कि वे इतनी रात को जंगल के रास्ते कहाँ जाते हो ? इस पर उसने कहा कि वह सिद्धेश्वरी बाड़ी जाता है । सिद्धेश्वरी बाड़ी की चर्चा चलने पर मैंने पूछा – "क्या यहाँ सिद्धेश्वरी बाड़ी हैं ?" उसने उत्तर दिया – 'हाँ, है । एक दिन तुम लोगों को ले जाऊँगा ।' इसके बाद एक दिन रात को वह भोलानाथ और मुझे सिद्धेश्वरी बाड़ी ले गया । वहां पहुँचते ही मैंने देखा कि जिस स्थान को छाया चित्र की भाँति मैं देखती आयी हूँ, यह वही

२. श्रीयुक्त बाउल बसाक । आप बाबा भोलानाथ के बचपन के मित्र हैं । ढाका वकील इंस्टिट्यूट में अध्यापक हैं । श्री श्री माँ के प्राचीन भक्तों में अन्यतम हैं ।

स्थान है । वही मन्दिर, वही बरगद का वृक्ष, सब कुछ वही । मैंने आगे बढ़कर बरगद के वृक्ष को स्पर्श किया। इस प्रकार सिद्धेश्वरी बाड़ी दर्शन करने के पश्चात् हम लोग शाहबाग वापस आये ।

"एक दिन दोपहर को कहाँ जाऊँगी सोचकर मैं सामान ठीक कर रही थी । कहाँ जाऊँगी, यह मैं भी नहीं जानती थी । घर के सामानों को सजाती रही । साथ ले चलने वाली सामग्रियों की गठरी बना रही थी । ठीक इसी समय भोलानाथ ने आकर पूछा–'यह क्या हो रहा है ?" मैंने उत्तर दिया– 'चलो, आज हमलोग सिद्धेश्वरी बाड़ी चलें ।' भोलानाथ ने किसी प्रकार की आपत्ति नहीं की । हम लोग तीसरे पहर सिद्धेश्वरी बाड़ी आये । वहाँ जाते ही ख्याल हुआ कि यहाँ मुझे तो सात दिन रहना है । भोलानाथ से प्रस्ताव करने पर उन्होंने कहा– 'यह कैसे हो सकता है ? मैं तो तुम्हारे पास नहीं रह सकता। तुम अकेली कैसे रहोगी ?' उन दिनों भोलानाथ शाहबाग की देखरेख किया करते थे । कुलियों को सबेरे कामकाज बताना पड़ता था । फलस्वरूप उनके लिए वहाँ से हटकर रहना संभव नहीं था । मैंने उनसे कहा– 'मैं अकेली रहूँगी, इससे क्या ? मैं तो माँ[9] के पास रहूँगी, इसमें डरने की क्या बात है ?" इस पर भोलानाथ राजी हो गये । वे शाम को जाकर भोर में कुलियों को क्या–क्या करना है, यह समझाकर चले आते और रात को सिद्धेश्वरी बाडी की भोगवाली कोठरी में सो जाते थे । सिद्धेश्वरी मन्दिर में माँ की मूर्ति के पीछे एक छोटी सी कोठरी थी, उसे में मैं सोती थी । तुम यह मत समझ लेना कि मैं यहाँ बहुत साधन–भजन करती थी। साधन–भजन कुछ भी नहीं करती थी । सिर्फ उस कमरे में पड़ी रहती थी। पता नहीं, एक अजीब आनन्द में मेरे दिन–रात गुजर रहे थे ।

"बाउल बाबू को जब इस बात का पता लगा कि मैंने सिद्धेश्वरी मन्दिर में सात दिनों के लिए आश्रय लिया है तब उसने सोचा कि यहाँ जरूर कोई अप्राकृत घटना होगी । यह सोचकर वह मन्दिर के द्वार के

पास नन्दी की तरह पहरा देने लगा । उद्देश्य यह था कि उसकी अजानकारी में कोई अलौकिक घटना न हो जाये । इस प्रकार छः दिन छः रात बीत गये । सातवें दिन रात के समय मुझे ख्याल हुआ कि मुझे इस मन्दिर से अभी चले जाना चाहिये । मैं उठकर बाहर आई । देखा कि भोर हो गया है । आश्चर्य की बात यह रही कि बाउल बाबू इतने दिनों तक रात भर पहरा देते रहे, इस समय वे गहरी नींद में बेहोश पड़े थे । भोर के वक्त एक बार जमकर पानी बरसा था । इस वक्त हल्की वर्षा हो रही थी । एक भी प्राणी जागृत नहीं है । सिर्फ भोलानाथ जाग रहे थे । मैंने उनसे अनुसरण करने का इशारा किया । उन्होंने मेरा अनुसरण किया । मैं मन्दिर से बाहर आकर मन्दिर के पीछे स्थित जंगल के भीतर से चलने लगी । कुछ दूर जाने पर एक जरा साफ-सुथरा स्थान मिला । पहले उस स्थान की प्रदक्षिणा की और तब वहीं बैठ गई । भोलानाथ मेरे बगल में आकर बैठ गया । उस समय वर्षा थम गई थी । मैं जिस जगह बैठी थी, उस स्थान पर बैठे-बैठे दाहिने हाथ से मिट्टी दबाने लगी । जमीन कड़ी थी, पर ज्यों-ज्यों दबाव बढ़ाती गई, त्यों-त्यों मेरा हाथ काफी दूर तक प्रवेश करता गया । यह आश्चर्य देखकर भोलानाथ डर गये और मुझे पकड़कर बोले- 'चलो, यहाँ से चलें।'[1] यह सुनकर मैंने हाथ बाहर निकाल लिया । हाथ के बाहर निकालते ही जहाँ गड्ढा हो गया था, वहाँ से फौवारे की तरह पानी निकलने लगा । यह बरसाती पानी

---

१. सिद्धेश्वरी के मन्दिर में काली विग्रह है । यह स्थान निर्जन है । यहाँ पंचमुण्डी का एक आश्रम है और एक आसन है । प्राचीनकाल से ही इस स्थान को सिद्धपीठ माना जाता है ।

१. इस घटना को मैं बाबा भोलानाथ की जबानी भी सुन चुका हूँ । उन्होंने कहा था – जब मैं इन्हें सीता की तरह पाताल प्रवेश करते देखा तब जल्दी से आकर इन्हें पकड लिया और कहा – यहाँ ठहरने की जरूरत नहीं हैं । चलो, यहाँ से चल दें ।

नहीं था, क्योंकि पानी गर्म और लाल रंग का था । लाल पानी के कारण मेरे हाथ का शंख–कंगन लाल हो गया । यह रंग सात दिनों तक कंगन पर बना रहा । इस घटना को भोलानाथ के अलावा अन्य किसी ने नहीं देखा । एक भैरवी ने दूर से हमें जंगल में बैठे रहते देखा था । उसने सोचा कि शायद हमें कोई गुप्त धन का पता लगा है। लेकिन पास आकर जब उसने देखा कि कहीं कुछ नहीं है तब वह चुपचाप चली गयी ।''

इस कहानी को सुनते समय खुकुनी दीदी[२] वहाँ मौजूद थीं ।

मैंने उनसे कहा – 'आप लोगों ने क्यों नहीं पूछा कि माँ आप क्यों उस जगह बैठी थीं और क्यों उस गड्ढे से गरम पानी का स्रोत

---

२. आप श्रीयुक्त शशांक मोहन मुखोपाध्याय की कन्या हैं । बाल्यकाल से ही गृहस्थी के प्रति अनासक्ता और धर्मभावापन्न हैं । माता–पिता ने अपनी लड़की के इस भाव को न समझकर, उसकी इच्छा न रहते हुए, उसका विवाह एक संभ्रांत और सम्पन्न परिवार में कर दिया । यह विवाह निष्फल हो गया । कारण विवाह के बाद जब इन्हें ससुराल ले जाया गया तब इन्होंने एक दिन भी साधारण महिला की भाँति दाम्पत्य–जीवन का निर्वाह नहीं किया । अक्सर आप इस तरह रोने लगती कि हृदय की क्रिया बिगड जाती थी । डाक्टरों ने राय दी कि इससे मृत्यु हो सकती है अतएव उसकी इच्छा के विरुद्ध कार्य न करें । इसके बाद से आप अपने नैहर में रहने लगीं और मन–प्राण से पिता–माता की सेवा करने लगीं। इसके अलावा और भी संसार में अन्य चीजों की आवश्यकता है, इसकी जानकारी इन्हें नहीं थी । श्री श्री माँ आनन्दमयी का जब ढाका आगमन हुआ तर शशांक बाबू जिस दिन इन्हें माँ के पास ले गये, उसी दिन से माँ के साथ इन्होंने ऐसा व्यवहार शुरू किया जैसे चिरपरिचिता और अन्तरंग सखी हैं । उसी दिन से आप माँ की प्रधान सेविका बन गयीं । इनके जीवन–चरित्र का अवलोकन करने पर ऐसा लगता है जैसे अब तक श्री श्री माँ के लिए प्रतिक्षा करती रहीं। इनके धार्मिक–जीवन का निर्माण माँ ने स्वयं अपने हाथों से किया है । ब्राह्मण कन्या होने पर भी माँ ने इन्हें यज्ञोपवित धारण करने और वेदाध्ययन करने का अधिकार दिया है । इनका नाम माँ ने रखा है – 'गुरुप्रिया' । हाल में आपने श्री श्री माँ की एक जीवनी लिखी है ।

बह निकला?' दीदी ने कहा – 'आपका क्या विचार है कि वकीलों की तरह उलट–तपास करने पर माँ से बातें मालूम होती है ? असली बात आते ही माँ चुप हो जाती हैं । इन्होंने उस स्थान को घेर देने की आज्ञा दी; लेकिन उस स्थान के बारे में अन्य बातें नहीं बतायीं ।' कुछ दिनों तक उक्त स्थान को घेरकर रख दिया गया । श्रीयुक्त प्राण गोपाल वसु[1] के खर्च से उस स्थान को घेरा गया था । बाद में श्रीयुक्त शंशांक मोहन मुखोपाध्याय (वर्तमान समय में अखण्डानन्दजी) ने उस स्थान को बन्दोबस्त लेकर एक आश्रम बनवाया था । ढाका में यहीं माँ का आदि आश्रम है । सुना कि जिस स्थान पर माँ ने गड्ढा किया था, आश्रम बनने पर भी उक्त स्थान को यथावत् रखा गया था । माँ वहां बैठकर अधिक समय तक भावावस्था में रहती थीं। आजकल वहां शिव मंदिर बनवाया गया है ।

यह आश्रम सिद्धेश्वरी मंदिर के पीछे हैं । स्थान बहुत निर्जन है और साधन–भजन करने के लायक है। जो लोग इस स्थान के इतिहास से परिचित हैं, वे लोग इस स्थान का माहात्म्य एव यहां आकर माँ ने जितना अद्‌भुत आचरण किया था, उन सबके कारणों का किंचित् अनुमान लगा सकते हैं। अगर इस स्थान से माँ का संबंध न रहता तो वे इस स्थान का चित्र अपनी दिव्य दृष्टि में न देखती एवं रात के अन्त में मन्दिर से चलकर उस दुर्योग में इस जंगलाकीर्ण स्थान में आश्रय न लेतीं, वर्ना कोई इसका कोई अर्थ नहीं होता है । यह सब व्यर्थ के विचार हैं, कहकर उड़ा नहीं दिया जा सकता । कारण इस ख्याल में अतीत का कोई सम्बन्ध स्पष्ट रूप से हैं। उसका स्पष्ट रूप क्या है, यह निश्चय करना असाध्य है इस दिशा में मां नीरव रहती हैं ।

---

१. आप ढाका के D.P.M.G. थे, आप वैद्यनाथधाम के स्व. बालानन्द स्वामी के शिष्य हैं ।

एक दिन सवेरे मां के पास जाते समय मार्ग में दीदीमाँ के यहां उन्हें देखकर वहीं जाकर प्रणाम किया । कुछ देर बाद शाहबाग देखने की इच्छा से माँ रवाना हुई । मैं भी पीछे–पीछे चल पड़ा । मार्ग में देखा कि एक व्यक्ति रस्सी बँधे एक छोटे बकरे को ढाकेश्वरी मन्दिर भवन में खींचते हुए ले जा रहा है । बकरा प्राणपण से चिल्ला रहा है । माँ ने उसकी ओर देखते हुए कहा– ''तुम्हें अधिक देर तक चीत्कार नहीं करना पड़ेगा ।'' मैंने माँ से पूछा–'माँ, क्या बिना बलि दिये पूजा नहीं होती ?'

माँ ने कहा– 'क्यों नहीं होगी ?' मैंने पूछा– 'तब लोग क्यों बलि देते हैं ?' माँ ने जवाब दिया– 'इसे कितने लोग समझ पाते हैं ?' इस तरह की बातें करते हुए हम लोग शाहबाग आ गये ।

शाहबाग कभी ढाका के नवाबों का विलास निकेतन था । यह स्थान रमना के घुड़दौड़ मैदन के पश्चिम दिशा में विशाल भूमि खण्ड में है । इस बाग में फल–फूल के अनेक पौधे और वृक्ष हैं । भीतर ईंटों से बने कई छोटे–छोटे कमरे हैं । पत्थरों से निर्मित नाचघर बहुत सुन्दर हैं ।उसके बगल में एक तालाब है । तालाब के चारों ओर देशी–विलायती अनेक फूलों के उद्यान हैं । इसके अलावा बेगमों के स्नान के लिए नीचे से ऊपर तक पक्का एक तालाब है जिसे कृत्रिम जल से भरा जाता है । इस पानी के निकासी की भी व्यवस्था है। तालाब के चारों ओर ऊँची दीवारें हैं । यह बाग इतना बड़ा है कि इसका अधिकांश भाग सफाई के अभाव में जंगल बना हुआ है । केवल छोटा–सा भाग वर्तमान नवाब द्वारा संरक्षित है । इस बगीचे की देखरेख एक मुसलमान कर्मचारी करता है । आम लोगों को इस बाग में जाने नहीं दिया जाता । लेकिन माँ के लिए सर्वत्र खुला आमन्त्रण है । क्या हिन्दू, क्या मुसलमान सभी माँ को जानते हैं । सभी माँ को श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं । माँ के साथ रहने के कारण बाग में प्रवेश

करने में कोई कठिनाई नहीं हुई । माँ मुझे विभिन्न जगह घूम–घूमकर दिखाने लगीं । कभी इस बाग की देखरेख बाबा भोलानाथ करते थे। उन दिनों माँ इस बाग में ही रहती थीं । वे जिस कमरे में रहती थीं, उसे भी दिखाया । काली–पूजा का भी एक इतिहास है जिसके बारे में माँ ने एक दिन वर्णन किया था ।

शाहबाग में एक मुसलमान फकीर की कब्र है । उक्त कब्र को माँ ने दिखाया । कब्र एक दालान में है और दालान का दरवाजा बाहर से ताला लगाकर बन्द किया गया है । दालान के कुछ हिस्से में जाली लगी है, इसलिए बाहर से झांककर देखा जा सकता है । इस फकीर के बारे में माँ ने बताया– "मैं जिन दिनों बाजितपुर में रहती थी, उन दिनों पहले पहल इस फकीर से मेरी मुलाकात हुई थी । शाहबाग में आने के बाद भी मेरी उनसे मुलाकात हुई थी । मानो फकीर साहब मुझे यहाँ बुला लाने के लिए बाजितपुर गये थे ।" यद्यपि जिस समय की बात माँ कह रही थीं, उसके बहुत पहले ही फकीर साहब का शरीरान्त हो गया था । फलतः माँ के साथ उनकी जो मुलाकात हुई थी, वह अशरीरी अवस्था में हुई थी ।

माँ कहने लगी– 'पहले पहल जब पिताजी से मुलाकात हुई थी, तब मुझे ऐसा लगा जैसे वे अरब देश के कोई महापुरुष हैं । उस समय तक मैं यह नहीं जानती थी कि अरब नामक कोई देश है या नहीं और है तो कहाँ है ? मैंने जब भोलानाथ से कहा कि मैंने अरब देश के एक महापुरुष को देखा तो भोलानाथ आश्चर्य के साथ बोले– 'तुम हिन्दू देवी–देवता के बदले यह सब क्या देखने लगी ? इसका अर्थ मैं नहीं समझा ?' बाद में शाहबाग आने पर जब इस कब्र को देखा तब पता लगाने पर ज्ञात हुआ कि अरब देश के एक फकीर यहाँ आकर कुछ दिनों तक थे । बाद में इसी बाग में उनका शरीरान्त हो गया । नवाब परिवार के लोग फकीर साहब को श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे, इसलिए उनकी कब्र बाग में बना दी गई । पिताजी के

साथ एक शिष्य भी था और ढाका में शिष्य के साथ पिताजी से मुलाकात हुई थी । मैंने पूछा–'ढाका में कितनी बार आपसे मुलाकात हुई थी?'

माँ ने कहा–'सिर्फ एक बार ।' जिस स्थान पर उनसे मुलाकात हुई थी, वह स्थान उन्होंने दिखाया । इसके अलावा एक झाड़ी दिखाती हुई बोलीं–'अक्सर इस झाड़ी से धूप की महक निकलती थी ।' यह सब देखकर मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि शाहबाग विलास–व्यसन का स्थान होने पर भी महापुरुष का आवास–स्थल है । अगर किसी स्थान से धूपादि सुगन्ध अकारण निकले तो वहाँ महापुरुष का सान्निध्य होता है । बहरहाल, माँ फकीर से युक्त कब्र के समीप खड़ी होकर एक कहानी सुनाने लगीं–

''एक दिन नाचघर में कीर्तन हो रहा था । कीर्तन के बीच मुझमें भावावेश हो गया । मैं भावावेश हालत में कमरे से बाहर निकल आई । कुछ दूरी पर एक मुसलमान को खड़ा देखकर मैंने अपने साथ आने का इशारा किया । वह बिना किसी प्रश्न के पीछे–पीछे चल पड़ा । उसे साथ लेकर मैं कब्र के समीप आयी । इस मुसलमान के जरिये घर का ताला खोला गया । भीतर जाकर मैं कब्र की दाहिने ओर खड़ी हो गयी । इधर मेरी ऐसी हालत हो गई कि हिलने–डुलने की शक्ति से हीन हो गई । नमाज पढ़ते वक्त मुसलमान जिस प्रकार आंगिक क्रियाएँ करते हैं, ठीक उसी प्रकार अपने आप मेरी आंगिक क्रियाएँ होने लगीं और मुँह से एक प्रकार की ध्वनि निकलने लगी जिसका एक वर्ण भी समझ नहीं सकी । कुछ देर बाद सब कुछ रुक गया और मैं घर से बाहर निकल आयी । इस घटना के कुछ दिनों बाद जब इस बात का प्रचार हो गया तब नवाब के यहाँ से नवाबजादी परीबानू का पुत्र, पुत्रवधू, लड़की और दामाद आकर मुझसे कहने लगे कि हमें भी नमाज पढ़ने के कायदे दिखाइए । मैंने उनसे कहा कि मैंने अपनी इच्छा से कुछ भी नहीं किया । वह तो अपने आप हो

गया । अपनी इच्छा से मैं वैसा नहीं कर सकती । लेकिन वे मानने को तैयार नहीं हुए । मुझे साथ लेकर पुनः कब्र के पास आये । आश्चर्य की बात यह हुई कि यहाँ कुछ देर रहने के बाद पहले वाले दिन की तरह मुझे पुनः भावावेश हुआ और अपने आप आंगिक क्रियाएँ होने लगीं । मुँह से वैसी ध्वनि निकलने लगी । उसे सुनकर नवाबजादी परीबानू की पुत्रवधू बोल उठीं–ये तो कुरान की आयतें पढ़ रही हैं।''

इस कहानी को सुनने के बाद माँ उक्त महापुरुष के शिष्य की कब्र दिखाने ले गयीं इस कब्र के ऊपर कोई कमरा नहीं है । यह कब्र कई वृक्षों के नीचे है और वृक्ष समूह कब्रिस्तान की रक्षा कर रहे हैं । मैंने भक्ति के साथ गुरु–शिष्य की कब्रों को प्रणाम किया। इसके बाद हम बगीचे से बाहर चले आये । अब मुझे लगा कि इन पुण्य स्थानों का दर्शन कराने के लिए मां मुझे शाहबाग ले गयी थीं। अन्यथा वहाँ जाने की कोई आवश्यकता नहीं थी ।

एक दिन मां स्वयं गड्ढे के भीतर सुरक्षित काली मूर्ति के बारे में कहानी सुनाने लगीं । उक्त कहानी की सारी बातें स्मरण नहीं हैं। अपनी स्मरण–शक्ति के आधार पर लिख रहा हूँ–

मां जिन दिनों शाहबाग में थीं, तभी से दो–एक करके भक्त वहां आते थे । नाना प्रकार के लोग नाना प्रकार की बातें कहा करते थे । बेगम परीबानू के इलाके के मैनेजर श्रीयुक्त योगेशचन्द्र घोष और उनके दामाद बसु महाशय अन्य सम्पत्तियों के साथ शाहबाग की देखरेख किया करते थे । इनके द्वारा नियुक्त हुए थे–बाबा भोलानाथ जो इस बाग के रक्षक थे । इन्हीं दिनों भोलानाथ के परिचित और अपरिचित लोग वहां आते और मां से मिलते तथा कीर्तन आदि में भाग लेते थे ।

इस बाग में सर्व साधारण का प्रवेश निषिद्ध था, फिर भी लोग वहां आते–जाते थे । इस बात को जानकर भी योगेश बाबू ने लोगों का आना–जाना बन्द नहीं किया ।

एक दिन योगेश बाबू का पुत्र श्री प्रफुल्लचन्द्र घोष महाशयने कुछ लोगों को इस बाग में देखकर अपने पिता से शिकायत की कि आम लोग इस बाग में आकर हल्ला–गुल्ला करते हैं और पेड़–पौधों को नुकसान पहुँचाते हैं । ऐसी हालत में जिस व्यक्ति को रक्षक के रूप में रखा गया है, उसे हटा दिया जाय ।

प्रफुल्ल बाबू ने इस बारे में भोलानाथ जी से भी शिकायत की थी । इस शिकायत को सुनकर भोलानाथ जी इतने नाराज हो गये कि नौकरी छोड़ देने के लिए तैयार हो गये । केवल माँ के अनुरोध पर उन्होंने ऐसा नहीं किया ।

माँ ने कहा–"देखा जाय, क्या होता है ? नौकरी तो किसी भी समय छोड़ सकते हो ।" प्रफुल्ल बाबू की शिकायत के बाद एक दिन योगेश बाबू और भूदेव बाबू जांच करने के लिए आये । योगेश बाबू ने भोलानाथ से प्रस्ताव किया कि वे माँ को अपने घर ले जाना चाहते हैं । क्या आपको इस पर कोई आपत्ति है ?

भोलानाथ ने माँ से पूछकर कहा–"कोई आपत्ति नहीं है ।"

फलतः योगेश बाबू माँ को अपने घर ले गये और वहाँ अनेक विषयों पर प्रश्न किये । माँ के उत्तरों से वे इतने प्रसन्न हुए कि उसी समय माँ के भक्त बन गये । इसके बाद से शाहबाग में होनेवाले कीर्तनों के प्रति कोई आपत्ति नहीं की गयी ।

इधर प्रफुल्ल बाबू नवाब के स्टेट में जहां नौकरी करते थे, वह पद समाप्त हो गया । जिस दिन समाप्त हुआ, उसी दिन उन्होंने माँ से पूछा–'माँ, मेरी नौकरी समाप्त हो गयी । अब क्या करूँ ?' माँ ने जवाब दिया–'तुम्हारा समय ठीक नहीं है ।' प्रफुल्ल बाबू ने पूछा–'कब ठीक होगा ?' माँ ने जवाब दिया–'आठ महीने बाद ।'

सचमुच यह देखा गया कि ठीक आठ माह बाद प्रफुल्ल बाबू को कुमिल्ला के कोर्ट आफ वार्ड में नौकरी मिली । इस कारण उनका माँ के प्रति भक्ति–विश्वास बढ़ गया । आगे चलकर योगेश बाबू और भूदेव बाबू दोनों ही परिवार माँ के विशिष्ट भक्त बन गये । इन दोनों परिवारों के प्रति माँ की विशेष कृपा रही ।

जब शाहबाग में सर्व साधारण के प्रवेश का झंझट समाप्त हो गया तब कुछ उत्साही भक्तों ने शाहबाग में काली–पूजा का प्रस्ताव रखा । शायद यह पूजा दीपावली के उपलक्ष्य में हुई थी । माँ से अनुमति मांगने पर मिल गयी । काली–पूजा के चार दिन पहले माँ गाड़ी से श्रीयुक्त शशांक मोहन मुखोपाध्याय के यहाँ निमंत्रण पर जा रही थीं। उस गाड़ी में माँ, भोलानाथ, शशांक बाबू और उनकी कन्या खुकुनी दीदी थीं । गाड़ी जब पल्टन के मैदान में नवाब साहब के बाग के तालाब के पास पहुँची तब देखा गया कि माँ तालाब की ओर मुँह करके ऊपर की ओर न जाने क्या देख रही हैं । ऊपर की ओर देखते समय लोग जैसे आँखों के ऊपर हाथ रखकर देखते हैं, माँ भी ठीक उसी प्रकार देख रही थीं । पलक हीन आंखें, मुँह पर दिव्य ज्योति। कुछ देर इस तरह देखने के बाद माँ पुनः प्रकृतिस्थ हो गयीं। उन्होंने क्या देखा, प्रश्न करने पर भी कोई उत्तर नहीं मिला । बाद में शशांक बाबू के घर पर माँ जब भोजन करने बैठीं तब भोजन करते–करते पुनः बांया हाथ ऊपर उठाकर निस्पन्द दृष्टि से ऊपर की ओर देखने लगीं। सभी लोग अवाक् होकर माँ की ओर देखते रहे । जब यह भाव समाप्त हो गया तब माँ ने दो बार ऊपर की ओर न जाने क्या देखा, यह जानने के लिए लोग अनुरोध करने लगे । लेकिन उस समय माँ ने कुछ न बताया ।

कुछ दिनों बाद माँ ने जरूर बताया था कि उन्होंने दो बार शून्य से काली मूर्ति को कूदते देखा था । आश्रम के मंदिर में वेदी पर

अन्नपूर्णा मूर्ति के बगल में जो काली मूर्ति है, वही उल्लेखित काली मूर्ति की अनुरूप है । इसे भी शून्य में स्थापित किया गया है, इसके पैरों के नीचे महादेव की मूर्ति नहीं है ।

बहरहाल, शशांक बाबू के यहाँ भोजन समाप्त करने के बाद माँ जब शाहबाग वापस आयीं तब समाधिस्थ हो गयीं । इधर काली–पूजा का समय हो रहा था । माँ समाधिस्थ हैं, कितनी बड़ी मूर्ति तैयार होगी, यह आदेश न पाने के कारण भक्तगण विचलित हो रहे हैं । तभी बाबा भोलानाथ के दिमाग में एक विचार आया । उन्होंने कहा–'उस दिन भावावस्था में जिस तरह हाथ उठाकर बैठी थीं, उसी प्रकार इनका हाथ उठाकर बैठाओ और नाप ले लो । उसी नाप के अनुसार मूर्ति बनवाओ।'

माँ को उसी तरह बैठाया गया । एक हाथ ऊपर उठाकर जिस तरह वहाँ बैठी थी और ऊपर की ओर देख रही थीं, उसी तरह करके, कमर से हाथ तक की लम्बाई नापी गयी । बाद में नाप लेकर यह देखा गया कि अगर इस नाप के अनुसार मूर्ति बनाने का आदेश दिया जायगा तो निर्दिष्ट दिन पूजा नहीं हो सकेगी । अब लोग बाजार की ओर इतनी बड़ी मूर्ति मिल सकेगी या नहीं, खोजने के लिए चल पड़े। दीपावली के उपलक्ष्य में अनेक तैयार मूर्तियाँ बाजार में बिकती हैं । काफी खोज करने के बाद एक दुकान में आठ मूर्तियाँ देखने में आयीं जिसमें एक मूर्ति मिली जो नाप के अनुरूप थी । मूर्ति का रंग घोर कृष्णवर्ण नहीं है । हरा और नीला दोनों का सम्मिश्रण करने पर जो रंग बनता है, वैसा है । सुना गया कि कारीगर ने अपनी इच्छा के अनुसार इतनी बड़ी मूर्ति बनायी है । सभी मूर्तियाँ बिक गयी हैं, सिर्फ यही मूर्ति अभी तक बिकी नहीं है । इस मूर्ति को खरीदकर शाहबाग में ले आया गया । इस पूजा के उपलक्ष्य में माँ की अनेक विभूतियाँ प्रकट हुई थीं । चूँकि उन विभूतियों की माँ के श्रीमुख से न सुन पाने के कारण लिख नहीं पा रहा हूँ । इस मूर्ति को विसर्जित

नहीं किया गया । और इस काली–पूजा के उपलक्ष्य में जो होमाग्नि प्रज्ज्वलित की गयी थी, उसे बुझाया नहीं गया ।

इस मूर्ति को माँ के साथ टीकाटुली, उत्तमा कुटीर और सिद्धेश्वरी आश्रम में स्थानान्तरित किया गया था ।

आगे चलकर जब रमना में आश्रम की स्थापना हुई तब इस आश्रम में यह मूर्ति स्थापित कर दी गयी । उन दिनों के आश्रम का मतलब यह था कि माँ के लिए फूस की एक झोपड़ी और मूर्ति के लिए टीन का छाजन वाला कमरा । इन्हीं दिनों मूर्ति के स्वर्णाभूषण की चोरी हुई । जब चोरी हुई, उस समय माँ कॉक्सबाजार में थीं । सुना जाता है कि जिस दिन अङ्ग हानि कर अलंकार की चोरी हुई, ठीक उसी समय कॉक्सबाजार में माँ का हाथ टूट गया, कहकर चीख उठी थीं । यह कहानी कई लोगों की जबानी सुन चुका हूँ । इस घटना की सत्यता के सम्बन्ध में मुझे सन्देह नहीं है । यह इसलिए लिखा कि इस बारे में माँ ने मुझे कभी कुछ नहीं बताया । ढाका वापस आने के बाद माँ मूर्ति के संस्कार के लिए प्रयत्न करने लगीं । आगे चलकर वर्तमान मन्दिर तैयार होने पर वेदी के नीचे गुफा में उक्त मूर्ति की स्थापना की गयी ।

एक दिन कालेज से रमना के आश्रम में आकर देखा कि वहाँ और अन्य भक्त हैं । माँ उन सभी से बातें कर रही हैं । माँ की बातें सुनते–सुनते काफी समय गुजर गया । ठीक इसी समय एक भक्त ने बातचीत के सिलसिले में साँपों के बारे में इशारा किया । मैं उसका इशारा न समझ पाने के कारण माँ से इस बारे में प्रश्न किया । माँ ने कहा–'साँपों के बारे में अनेक कहानियाँ हैं । फिर कभी सुनाऊँगी। इस वक्त देर हो गयी है, घर जाओ ।'

बाद में एक शनिवार को सबेरे माँ का दर्शन करने के लिए सिद्धेश्वरी आश्रम गया । उस समय स्वतः प्रवृत्त होकर साँपों की कहानी

सुनाने लगीं । माँ ने कहा–"कुंजबाबू[1] के एक लड़के की जन्म पत्रिका में लिखा था कि 'दन्ताघात' से उसकी मृत्यु होगी । कुंजबाबू उस बालक को मेरे पास रखना चाहते थे । मैंने उनसे कहा–'मेरे पास रखने की जरूरत नहीं । उसे अपने पास ही रखो ।' इसके कुछ दिनों बाद मेरे बाहर जाने की चर्चा हुई । भोलानाथ भी बाहर जाने के लिए तैयार थे । उन दिनों हमलोग शाहबाग में रहते थे । उनके साथ एक शर्त हुई कि घर से स्टेशन पहुँचने तक अगर किसी परिचित व्यक्ति से मुलाकात हो जायगी तो हम लोग कहीं नहीं जायेंगे । शाहबाग वापस चले आयेंगे ।

"एक दिन भोर के वक्त भोलानाथ को साथ लेकर रवाना हुई । उस दिन ऐसा हुआ कि मार्ग में एक भी परिचित आदमी नहीं मिला । जो लोग सबेरे बाग में काम करते थे, वे भी उस दिन अनुपस्थित थे । ज्योतिष बाबू[1] शाहबाग के समीप एक छोटे से मकान को किराये पर लेकर रहते थे । उन दिनों वे बीमार थे । वे नित्य सबेरे अपने घर के बरामदे में टहलते थे । हम लोग उनके मकान के निकट से गये, लेकिन उस दिन ज्योतिष बाबू भी दिखाई नहीं दिये । इस प्रकार बिना किसी को कोई सूचना दिये, हम लोग विंध्याचल आ गये । कुंज बाबू उन दिनों सपरिवार विंध्याचल में थे । एक दिन उनकी पत्नी,

---

१. श्रीयुक्त कुंज बिहारी मुखोपाध्याय । आप श्रीयुक्त शशांक मोहन मुखोपाध्याय के भाई हैं । आप भी संन्यासी हैं । माँ ने इनका नाम तुरीयानन्द रखा है । आजकल पुरी में रहते हैं ।

१. श्री ज्योतिषचन्द्र राय (भाईजी) । आप डायरेक्टर आफ एग्रीकल्चर में पर्सनल असिस्टेण्ट थे । माँ जिस दिन की चर्चा कर रही हैं, उन दिनों तपेदिक से पीड़ित होकर रमना में निवास करते थे । इस भयंकर रोग से उन्हें माँ की कृपा से मुक्ति मिली थी, इसे प्रत्येक व्यक्ति जानता है । बंगला १३४४ में ज्योतिष बापू, माँ और बाबा भोलानाथ के साथ कैलास गये थे । वहाँ से वापस आते समय उनका शरीरान्त अलमोड़ा में हो गया था । "सत्वाणी", "मातृ–दर्शन" आदि कई ग्रन्थ इनकी कृतियाँ हैं । मातृ–दर्शन में इन्होंने श्री श्री माँ के बारे में अपनी अभिज्ञता का उल्लेख किया है । यह पुस्तक उनकी मृत्यु के बाद प्रकाशित हुई थी ।